न्यायमूर्ति वी. के. बाली और एम. एल. सिंघल के समक्ष.

अरावली पाइप्स लिमिटेड,-याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा वित्तीय निगम-उत्तरदाता

सी. डब्ल्यू. पी. 17622 of 1997

24 अगस्त, 1998

भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226/227—राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 - धारा 29 और 30- बिना कोई सूचना दिए इकाई का कब्जा - उसे चुनौती - याचिकाकर्ता सभी बकाया भुगतान करने के लिए तैयार और इच्छुक - रु 10 लाख का भुगतान किया गया और याचिकाकर्ता को कब्ज़ा वापस दिया गया - कुछ राशि अभी भी बकाया है - राशि विवादित - निगम के पास व्यतिक्रम करने वाले पक्ष से राशि की वसूली के लिए धारा 30 के तहत नियमित उपाय है - निगम को पहली बार में धारा 30 के तहत कार्यवाही का सहारा नहीं लेना चाहिए।

अभिनिर्णित है की इस स्तर पर याचिकाकर्ता के खिलाफ अधिनियम की धारा 29 के तहत कार्रवाई नहीं की जा सकती । जिस राशि पर पक्षों के बीच विवाद है, वह निश्चित रूप से विवादास्पद है। यहां तक कि लेखा परीक्षकों का कहना है कि यह एक ऐसा मामला है जिसमें अदालत को अपना फैसला देना चाहिए कि क्या राशि याचिकाकर्ता द्वारा देय है या नहीं। यदि इस तरह के किसी मामले में भी प्रतिवादी निगम को अधिनियम की धारा 29 के तहत कार्यवाही करने की अनुमति दी जाती है और वह भी पहली बार में, तो यह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का सीधा उल्लंघन होगा। इसके अलावा, राज्य वित्तीय निगम अधिनियम में धारा 30 है जो प्रतिवादी निगम को उस राशि की वसूली के लिए एक नियमित उपाय प्रदान करती है जो एक व्यतिक्रम करने वाले पक्ष से देय हो सकती है। जहाँ तक धारा 29 का संबंध है, वह अदालत के समक्ष कार्यवाही का सहारा लिए बिना प्रतिवादी निगम को एक संक्षिप्त प्रक्रिया प्रदान करता है। जहां तक धारा 30 का संबंध है, निगम के पास राशि की वसूली के लिए एक नियमित उपाय उपलब्ध है और यदि इसका भुगतान नहीं किया जाता है, तो इकाई को बेचा जा सकता है। न्यायालय आश्वस्त है कि इस मामले के तथ्य ऐसे हैं जहां निगम को अधिनियम की धारा 30 का आश्रय लेना चाहिए ।

(पैरा 7)

अशोक अग्रवाल, वरिष्ठ अधिवक्ता सहित आर. के. जैन, अधिवक्ता - वास्ते याचिकाकर्ता।

आर एस चाहर, अधिवक्ता सहित कमल सहगल अधिवक्ता,-- वास्ते प्रतिवादी ।

निर्णय

न्यायमूर्ति वी. के. बाली *(मौखिक)*

(1) मेसर्स अरावली पाइप्स लिमिटेड, कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत निगमित एक कंपनी, जिसने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत सिविल रिट याचिका संख्या 17622 of 1997 दायर की थी, जिसमें प्रतिवादी-

निगम को राज्य वित्तीय निगम अधिनियम की धारा 29 के तहत बिना कोई नोटिस दिए 6 अक्टूबर, 1997 को ली गई इकाई का कब्जा वापिस सौंपने का निर्देश देने की मांग की गई थी।

(2) याचिकाकर्ता का मामला यह है कि वह सभी बकाया राशि का भुगतान करने के लिए तैयार था और इसके बावजूद उसके खिलाफ अधिनियम की धारा 29 के तहत कार्रवाई की गई थी।

(3) इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी निगम को प्रस्ताव का नोटिस जारी किया और पक्षों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, 8 जनवरी, 1998 को निम्नलिखित आदेश पारित किया गयाः—

"दलीलों के दौरान, पक्षों के विद्वान वकील के बीच एक आम सहमति बन गई है। याचिकाकर्ता का प्रतिनिधित्व करने वाले श्री मोहन जैन का कहना है कि यदि आज से एक सप्ताह के भीतर इकाई का कब्जा याचिकाकर्ता को सौंप दिया जाता है, तो बकाया राशि, माने जमा ब्याज, इस तरह से दिया जाएगा कि कब्जा लेने की तारीख से दो सप्ताह के भीतर 10 लाख रुपये का भुगतान किया जाएगा और शेष राशि 31 मार्च, 1998 तक दी जाएगी। श्री मोहन जैन द्वारा दिया गया बयान प्रत्यर्थी का प्रतिनिधित्व करने वाले श्री आर. एस. चाहर को स्वीकार्य है। पक्षों के बीच बनी सहमति को देखते हुए, हम आदेश देते हैं कि प्रतिवादी निगम उन्हें आज से एक सप्ताह के भीतर इकाई का क़ब्ज़ सौंप देगा। उक्त तिथि से दो सप्ताह के भीतर याचिकाकर्ता निगम को 10 लाख रुपए का भुगतान करेगा और शेष राशि 31 मार्च, 1998 तक। यह स्पष्ट किया जाता है कि याचिकाकर्ता द्वारा 31 मार्च, 1998 तक किश्तों में देय राशि और ब्याज जो दूसरे शब्दों में वह राशि है जिसे याचिकाकर्ता ने भुगतान करने में चूक की है। यदि याचिकाकर्ता द्वारा वादा की गई राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, तो यह याचिका खारिज हो जाएगी और प्रतिवादी परिसर का कब्जा तुरंत ले सकेगा।

याचिका का निपटारा तदनुसार किया जाता है।"

(4) याचिकाकर्ताओं द्वारा दो सप्ताह के भीतर दस लाख रुपये की राशि का भुगतान करने पर, प्रतिवादी निगम ने इकाई का कब्जा याचिकाकर्ता को सौंप दिया था। हालाँकि, याचिकाकर्ता ने दिनांक 8.1.1998 के आदेश पर स्पष्टीकरण के लिए वर्तमान आवेदन दायर किया है। यह आवेदन, प्रत्यर्थी निगम को नोटिस के बाद, 1 अप्रैल, 1998 को इस न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए आया जब निम्नलिखित आदेश पारित किया गयाः—

हमने इस सिविल मिस एप्लीकेशन में पक्षों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील को सुन लिया है। इस आवेदन में प्रार्थना हमारे आदेश, दिनांक 8.1.1998 को स्पष्ट करने के लिए की गई है। हमारा विचार है कि 8.1.1998 दिनांकित आदेश स्पष्ट है और किसी स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है। हालाँकि, पक्षों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील इस बात पर गर्मजोशी से विवाद किया हैं कि 31.3.1998 द्वारा देय राशि क्या हो सकती है, माने 31.3.1998 तक की किश्त जमा ब्याज। जबकि, यह याचिकाकर्ता का तर्क है कि रु 4. 78 लाख बकाया था जिसका भुगतान उल्लिखित हमारे आदेश के आधार पर दस लाख रुपये के अतिरिक्त किया गया है। यह प्रतिवादीगण का पक्ष है कि कुल रु 3.69 करोड़ की राशि में से याचिकाकर्ता पर दिनांक 31.3.1998 तक 2.20 करोड़ रुपये का भुगतान बकाया है। इस प्रकार, डिफ़ॉल्ट रू 2.89 करोड़ का है जो कि राशि अन्यथा दिनांक 31.3.1998 तक भुगतान की जानी थी । परस्पर विरोधी स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हम शारदा एंड कंपनी के लेखा परीक्षकों को प्रतिवादी के खातों का निरीक्षण करने के लिए नियुक्त करते हैं। लेखा परीक्षक एक रिपोर्ट देंगे कि याचिकाकर्ता द्वारा मूल समझौते के अनुसार दिनांक

31.3.1998 तक ब्याज सहित कितना भुगतान किया जाना था। पक्षकारों को सुनने के बाद लेखा परीक्षकों द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत की जाएगी। जब तक रिपोर्ट दाखिल नहीं की जाती, तब तक प्रतिवादी निगम विवादग्रस्त कारखाने का कब्जा नहीं लेगा। दिनांक 17.4.1998 के लिए स्थगित किया गया।.

(5) ऊपर निर्दिष्ट आदेशों के अनुसार, शारदा एंड कंपनी, प्रतिवादी निगम के लेखा परीक्षकों ने रिपोर्ट प्रस्तुत की। लेखा परीक्षकों की रिपोर्ट के अनुसार, रु 5,52,211 निगम के लिए देय है जिसे याचिकाकर्ता को 31 मार्च, 1998 तक भुगतान करना था। यह भी निश्चित है कि अब तक किश्त के साथ ब्याज की कुछ अन्य किश्त भी देय हो गई होगी। कुछ शीर्षों पर लेखा परीक्षकों की रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि इसे न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। लेखा परीक्षकों की उक्त रिपोर्ट के पैरा 5,10 और 11 इस प्रकार हैं:–

1. .मेसर्स अरावली पाइप्स लिमिटेड ने दावा किया है कि यह इकाई 6 अक्टूबर, 1997 से 15 जनवरी, 1998 तक हरियाणा वित्तीय निगम के अवैध कब्जे में रही। तदनुसार, इस अवधि के लिए कोई ब्याज देय नहीं है। भविष्य की सभी किश्तों का पुनर्भुगतान इस अवधि तक स्थगित कर दिया जाए।हरियाणा वित्तीय निगम ने जवाब दिया है कि इकाई हरियाणा वित्तीय निगम के अवैध कब्जे में नहीं थी और कब्जा लेने से पहले कंपनी को आवश्यक पंजीकृत नोटिस जारी किए गए थे।

हमारी राय में, केवल उच्च न्यायालय ही यह तय करने में सक्षम है कि कब्जा कानूनी था या अवैध।यदि कब्जा अवैध माना जाता है, तो याचिकाकर्ता के तर्क के अनुसार ब्याज की मात्रा जो उस अवधि के दौरान एचएफसी द्वारा नहीं ली जानी थी, जिसके लिए इकाई अवैध कब्जे में रही, यानी 6 अक्टूबर, 1997 से 15 जनवरी, 1998 तक, जो रु 14,17,633 है ।इसके अलावा, कंपनी द्वारा यह तर्क दिया गया था कि भविष्य की सभी किश्तों को 3 महीने और 10 दिनों की इस अवधि के लिए स्थगित कर दिया जाए।उसी के प्रभाव को हमारे विवरण में अलग से दर्शाया गया है, जैसा कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा तय किया जाना है।

10. मेसर्स अरावली पाइप्स लिमिटेड ने दावा किया है कि उनके द्वारा 180 लाख रुपये का पुल ऋण लिया गया था जिस्म से 20 मई, 1995 को हरियाणा वित्तीय निगम के इक्विटी निर्गम में अभिदान के लिए 25 लाख रुपये डायवर्ट किए गए थे।तदनुसार , मेसर्स अरावली पाइप्स लिमिटेड ने 47,34,850 रुपये के समायोजन की मांग की है जो की वह राशि है जिसमें ब्रिज ऋण पर लागू ब्याज और उसके ऋण खातों से कार्यशील कैप्टियल ऋण शामिल हैं।

हमने 180 लाख रुपये के ब्रिज ऋण के खाते के विवरण को देखा है। बयान के अनुसार, यह राशि 19 मई, 1995 को वितरित की गई थी।कंपनी ने दावा किया है कि एच. एफ. सी. द्वारा 180 लाख रुपये वितरित किए गए थे जिसके तुरंत बाद मई में एच. एफ. सी. के शेयरों में 25 लाख रुपये का निवेश ज़बरदस्ती लिया गया।

हमारी राय में इस मामले का दूरगामी निहितार्थ है और यह माननीय उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में है। हालांकि, अगर अरावली पाइप्स लिमिटेड के दावे को माननीय उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है, तो रु 43,41,127 (1 मार्च, 1998 तक) को शेयरों में निवेश की तारीख से क्रेडिट देकर और ब्रिज लोन और डब्ल्यू. सी. टी. एल. आदि पर लागू दरों पर ब्याज लागू करके ब्रिज लोन खाते में लिखा जाना है।

11. कंपनी ने अपने पट्टे के खाते में दावा किया है कि वे 31 मार्च, 1998 को किसी भी पट्टे के किराये का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं हैं क्योंकि एच. एफ. सी. ने पहले ही 14 नवंबर, 1997 से अनुबंध को समाप्त

कर दिया है और कंपनी ने 14 नवंबर, *1997* के अपने पत्र के माध्यम से एच. एफ. सी. को उपकरण का कब्जा लेने की पेशकश भी की है।

एच. एफ. सी. पहले ही जुलाई, 1996 से 31.3.1998 तक 65.80 लाख रुपये के पट्टे के किराये का दावा कर चुका है। हमारी राय में, पट्टा सहायता ऋण खातों के अंतर्गत नहीं आती है और यह तय करना माननीय उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में आता है कि पट्टा अनुबंध की समाप्ति कानूनी है या नहीं और क्या कंपनी पट्टा समझौते की समाप्ति के बाद पट्टा किराये का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है।इसलिए हमने रिपोर्ट में दी गई राशि पर कोई टिप्पणी नहीं की है।"

(6) जब लेखा परीक्षकों की रिपोर्ट मामले के रिकॉर्ड पर आई , तो प्रतिवादी-निगम का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील उक्त रिपोर्ट के खिलाफ आपत्तियां दर्ज करना चाहते थे। न्यायालय ने मौखिक रूप से कहा था कि यह एक दीवानी मुकदमा नहीं था जिसमें इस तरह की आपत्तियों को दर्ज किया जा सके और रिपोर्ट के पक्ष और विपक्ष में उठाए गए तर्कों पर विचार किया जाएगा।उपरोक्त टिप्पणियों के बावजूद, पंजीयक को दिए गए एक कवर नोट द्वारा आपत्तियां दायर की गई हैं कि प्रतिवादी निगम को लेखा परीक्षकों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर आपत्तियां दायर करने की अनुमति दी जा सकती है।इन आपत्तियों को दर्ज करने की अनुमति के लिए कोई औपचारिक आवेदन दायर नहीं किया गया था और न ही इसकी एक प्रति विरोधी वकील को दी गई थी।

(7) हमने पक्षकारों के विद्वान वकील को सुना है और मामले के अभिलेखों के साथ-साथ लेखा परीक्षकों की रिपोर्ट भी देखी है।इससे पहले कि हम इस मामले में आगे बढ़ें, यह उल्लेख किया जा सकता है कि सर्वोच्च न्यायालय ने हाल के फैसलों में कहा है कि निगम अंतिम उपाय के रूप में अधिनियम की धारा 29 के तहत कार्रवाई कर सकता है।इतना कि अगर चूक करने वाले पक्ष की इकाई पर कब्जा कर लिया जाता है और उसे बेच दिया जाता है, तो भी निगम को दी गई उच्चतम कीमत पर इसे खरीदने के लिए इकाई के मालिक को पहला प्रस्ताव देना पड़ता है।लेखा परीक्षकों की रिपोर्ट से, जो कोई और नहीं बल्कि प्रत्यर्थी-निगम के लेखा परीक्षक हैं, रु 5,52,211 याचिकाकर्ता द्वारा 31 मार्च, 1998 तक भुगतान किया जाना प्रतीत होता है।हम याचिकाकर्ता कंपनी को आज से एक सप्ताह के भीतर इस राशि का भुगतान करने का आदेश देते हैं और साथ ही अन्य राशि जो आज से एक महीने के भीतर ब्याज के साथ देय हो सकती है। इस स्तर पर, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री अशोक अग्रवाल कहते हैं कि 5,52,211 की राशि में एक चेक 4. 78 लाख रुपये की राशि का, जैसा कि लेखा परीक्षकों द्वारा देय माना गया था, निगम को 30 मार्च, 1998 को दिया गया था । वह आगे कहते हैं कि यदि चेक को प्रतिवादी निगम द्वारा भुनाया नहीं गया होता, तो रु 5,52,211 ब्याज के साथ का भुगतान ऊपर बताए गए तरीके से किया जाएगा।

(8) इस न्यायालय का विचार है कि यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें इस स्तर पर याचिकाकर्ता के खिलाफ अधिनियम की धारा 29 के तहत कार्रवाई की जा सके। जिस राशि पर पक्षों के बीच विवाद है, वह निश्चित रूप से विवादास्पद है।यहां तक कि लेखा परीक्षकों का कहना है कि यह एक ऐसा मामला है जिसमें अदालत को अपना फैसला देना चाहिए कि क्या राशि याचिकाकर्ता द्वारा देय है या नहीं।यदि इस प्रकार के किसी मामले में भी प्रत्यर्थी निगम को अधिनियम की धारा 29 के तहत कार्यवाही करने की अनुमति दी जाती है, वह भी पहली बार में, तो यह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का सीधा उल्लंघन होगा।इसके अलावा, राज्य वित्तीय निगम अधिनियम में धारा 30 है जो प्रतिवादी निगम को उस राशि की वसूली के लिए एक नियमित उपाय प्रदान करती है जो एक चूक करने वाले पक्ष से देय हो सकती है।जहाँ तक धारा 29 का संबंध है, वह न्यायालय के समक्ष कार्यवाही का सहारा

लिए बिना प्रतिवादी-निगम को एक संक्षिप्त प्रक्रिया प्रदान करता है।जहां तक धारा 30 का संबंध है, निगम को राशि की वसूली के लिए एक नियमित उपाय उपलब्ध है और यदि उसका भुगतान नहीं किया जाता है, तो इकाई को बेचा जा सकता है ।न्यायालय आश्वस्त है कि इस मामले के तथ्य ऐसे हैं जहां निगम को अधिनियम की धारा 30 का आश्रय लेना चाहिए ।

(9) उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, हम निर्देश देते हैं कि प्रतिवादी निगम इस स्तर पर याचिकाकर्ता के खिलाफ अधिनियम की धारा 29 के तहत कार्रवाई नहीं करेगा।जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उक्त अधिनियम की धारा 30 का सहारा लेने की अनुमति है। निर्देशित है कि अधिनियम की धारा 30 के तहत आवेदन दायर किए जाने की स्थिति में, जो जिला न्यायाधीश के समक्ष होगी, उसका यथासंभव शीघ्रता से निपटान किया जाएगा और अधिमानतः याचिकाकर्ता के पेश होने या सर्विस होने की तारीख से छह महीने के भीतर।प्रत्यर्थी निगम के पास आदेश 38 नियम 5 सी. पी. सी. के तहत आवेदन दायर करने और निर्णय से पहले कुर्की का आदेश प्राप्त करने का अधिकार होगा।याचिकाकर्ता कंपनी किसी भी तरह से भूमि, संयंत्र और मशीनरी को तब तक नहीं बेचेगी/गिरवी रखेगी या उसका निपटान नहीं करेगी जब तक कि प्रतिवादी द्वारा आदेश 38 नियम 5 सी. पी. सी. के तहत आवेदन दायर नहीं किया जाता है।इसके बाद, निगम के हितों की रक्षा करने के लिए आदेश पारित करना विद्वान जिला न्यायाधीश के विवेक पर होगा।तदनुसार निराकृत किया गया।

अस्वीकरण :

स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि यह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। सभी व्यावहारिक और आपराधिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेज़ी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त होगा।

हिमांशु आर्य

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी, हरियाणा